कहानी माला—२४

अन्ताक्षरी

खुदाराम

● पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'

खुदाराम

● पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'

हमारे कस्बे के इनायत अली कल तक नौमुसलिम थे। उनका परिवार केवल सात वर्षो से खुदा के आगे घुटने टेक रहा था। इसके पहले उनके सिर पर चोटी थी, माथे पर तिलक था और घर में ठाकुरजी थे। हमारे समाज ने उनके निरपराध परिवार को जबर्दस्ती मन्दिर से ढकेलकर मसजिद में भेज दिया था।

बात यों थी : इनायत अली के बाप उल्फत अली जब हिन्दू थे, देवनन्दन प्रसाद थे,तब उनसे अन्जाने में एक अपराध बन पड़ा था एक दिन एक दुखिया गरीब युवती ने उनके घर आश्रय माँगा। पता-ठिकाना पूछने पर उसने एक गाँव का नाम लिया। कहा...

"मैं बिल्कुल अनाथ हूँ। मेरे मालिक को गूजरे छः महीने से ऊपर हो गये। जब तक वह थे मुझे कोई फिक्र न थी। जमींदार की नौकरी से चार पैसे करके

वही हमारी दुनिया चलाते थे। उनके वक्त गरीब होने पर भी मैं किसी की चाकरी नहीं। करती थी। अब उनके बाद, उसी गाँव में पेट के लिए परदा छोड़ते मुझे शर्म मालूम होने लगी। इसलिए उस गाँव को छोड़, इस शहर में नौकरी तलाश रही हूँ। मुझे और कुछ नही, चार रोटियाँ और चार गज कपड़े की जरूरत है। आपको भगवान ने चार पैसे दिये हैं। मेरी हालत पर रहम कीजिए। मुझे अपने घर के एक कोने में रहने और बाकी जिन्दगी ईश्वर का नाम लेने में बिताने दीजिए। आपका भला होगा।

जात पूछने पर उसने अपने को अहीरन बताया। देवनन्दन प्रसाद जी सरल हृदय थे स्त्री की हालत पर दया आ गई। उनकी स्त्री ने अहीरन की मदद की। कहा–

"रख लो न। चौका बर्तन किया करेगी पानी भरेगी दो रोटी खायगी और पड़ी रहेगी।"

अहीरन रख ली गई। दो महीने त्रक वह घर का काम काज सँभालती रही।

इसके बाद एक दिन एकाएक वज्रपात हुआ। न जाने कहाँ से ढूँढते-ढूँढते एक आदमी देवनन्दन जी के यहाँ आया। पूछने लगा–

"बाबूजी आपने कोई नई मजदूरिन रखी है?"

"क्यों भाई? तुम्हारे इस सवाल का क्या मतलब है।"

"बाबूजी दो महीनों से मेरी औरत लापता है। मैं उसी की तलाश में चारों ओर की खाक छान रहा हूँ। जरा सी बात पर लड़कर भाग खड़ी हुई।"

इसी समय हाथ में घड़ा और रस्सी लिये वह अहीरन घर से बाहर निकली। उसे देखते ही पुरुष झपटकर उसके पास पहुँचा।

"अरे , फिरोजी ! यह क्या? किसके लिये पानी भरने जा रही है।"

"इधर आओ जी। जरा कड़े होकर देवनन्दन जी ने कहा–

"यह कैसा पागलपन है? तुम किसे फिरोजी कह रहे हो? वह हमारी मजदूरिन है। हमारे लिये पानी लेने जा रही है। उसका नाम फिरोजी नहीं रुकमिनियाँ है। किसी गैर औरत का इस तरह अपमान करते तुम्हें शर्म नही आती?"

रुकमिनियाँ को फिरोजी कहने वाले ने देवनन्दन की ओर देखकर कहा।–

"बाबूजी, आपने धोखा खाया। यह हिन्दू नहीं मुसलमान है। रुकमिनियाँ नहीं, मेरी भागी हुई बीबी फिरोजी है।"

देवनन्दन के काटो तो खून नहीं।

"बाबा रे बाबा ! एक बूढी ने राग अलापा....औरत का ऐसा दीदा ! मर्द को छोड़कर दूसरे देश और दूसरे के घर चली आयी !

सामने के दरवाजे पर से दूसरी अधेड़ औरत ने कहा....

"अब देखो रघुनन्दन के बाप का क्या होता है। दो महीनों तक तुर्किन के हाथ का पानी पीकर और उससे चौका बर्तन कराकर उन्होने अपना धरम खो दिया है। हमारे....तो कह रहे थे कि अब उनके घर से कोई नाता न रखा जायगा।"

"नाता कैसे रखा जा सकता है ! " पहली बूढ़ी ने कहा, "धरम तो कच्चा सूत होता है। जरा-सा इधर-उधर होते ही टूट जाता है। फिर हमारा हिन्दू का धरम ! राम-राम ! जिसको छूना मना है, सुबह जिसका मुहँ देखना पाप है, उनके हाथ से देवनन्दन ने जल ग्रहण किया।

क्यों?

"तुम अब हिन्दू नहीं, मुसलमान हो। दो महीने तक मुसलमान से पानी भराने और चौका बर्तन कराने के बाद भी क्या तुम्हारा हिन्दू रहना संभव है?"

"मैंने कुछ जान बूझकर तो मुसलमानिन के हाथ का पानी पिया नहीं। उसने मुझे धोखा दिया। इसमें मेरा क्या अपराध हो सकता है?"

"भैया मेरे हम हिन्दू हैं। कोई जान-बूझकर गो-हत्या करने के लिये गाय के गले में रस्सा नही बाँधता। फिर भी बँधी हुई गाय के मरने पर बाँधने वाले को हत्या लगती है। प्रायश्चित करना पड़ता है।

प्रायश्चित-चर्चा चलने पर व्यवस्था के लिये पुरोहित और पण्डितों की पुकार हुई। बस ब्राहमणों ने चारों वेद, छः शास्त्र, छत्तीसों स्मृति और अठारहों पुराण का मत लेकर यह व्यवस्था दी कि "अब देवनन्दन पूरे म्लेच्छ हो गए । यह किसी तरह भी हिन्दू नहीं हो सकते।"

लाचार , स्माज से अपमानित, परित्यक्त, पतित देवनन्दन सपरिवार अल्ला मियाँ की शरण में चले गये। वह और करते ही क्या ! मनुष्य स्वभाव से ही सहानुभूति चाहता है, प्रेम चाहता है। हिन्दू समाज ने इन सब दरवाजों को देवनन्दन के लिये बन्द कर दिया। इतना हो जाने पर उनके लिये मुसलमान होने के सिवा दूसरा कोई पथ ही नहीं था। देवनन्दन, उल्फत अली बन गये और उनका पुत्र रघुनन्दन, इनायत अली।

उस दिन आर्य समाज के मंत्री पण्डित वासुदेव शर्मा समाज-भवन में ही बैठे कोई उर्दू अखबार पढ़ रहे थे। भवन के बाहर–बरामदे में दो पंजाबी महाशय पायजामा और कमीज पहने सायं-सन्ध्या कर रहे थे। उसी समय एक दुबला-पतला लम्बा सा पुरुष भवन में आया। उसकी आहट पा शर्माजी ने चश्माच्छादित आखों से उसकी ओर देखा। पहचान गए.....

"कहो मियाँ इनायत अली, आज इधर कैसे?"

"आप ही की सेवा में कुछ निवेदन करने आया हूँ।"

शर्माजी ने चश्मा उतार लिया। उसे कुरते के कोने से साफ करने के बाद

पुनः नाक पर चढ़ाते-चढ़ाते बोले.....

"भाई, इनायत बड़ी शुद्ध हिन्दी बोलते हो?"

हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य का बाजार गर्म होने के एक महीना पूर्व एक विचित्र पुरुष हमारे कस्बे में आये। उनकी अवस्था पचास वर्षो से अधिक जान पड़ती थी। वह वस्त्र के नाम पर केवल लँगोटी धारण किया करते थे। वही उसकी सारी गृहस्थी और सम्पत्ती थी। उनका मुख तो रोबीला नहीं था, पर उस पर विचित्र आकर्षण दिखाई देता था। दाढ़ी फुट भर लम्बी थी। सर के बाल भी बड़े-बड़े थे।

उनमें एक ऐसा चमत्कार था, जिससे कस्बे के छोटे-छोटे लड़के उन पर जान दिया करते थे। हाँ उनका नाम बताना तो भूल गया। वह अपने को 'खुदा राम' कहा करते थे। खुदाराम गली में आये हैं, यह सुनते ही लड़कों की मण्डली जान छोड़कर उनकी ओर झपट पड़ती....."खुदाराम पैसे दो ! खुदाराम, पैसे दो !" की आवाज से गली गूँज उठती थी। पहले तो खुदाराम दो-चार बार लड़कों को मुँह बिगाड़-बिगाड़कर डराने की कोशिश करते, फिर दो-तीन बच्चों को पीठ पर चढ़ाकर बगल में दबाकर या कन्धों पर उठाकर भाग खड़े होते "भागो ! भागो ! हो हो हो हो? लेनाजी?" आदि कहते हुए अन्य लड़के खुदाराम को घेर लेते। अन्त में लाचार हो वह खड़े हो जाते, बच्चों को पीठ या कन्धे के नीचे उतार देते और पूछने लगते–

"बन्दरो ! क्या चाहिए?"

"पैसे खुदाराम, पैसे !"

खुदाराम बड़े जोर से हँसते-हँसते खाली मुट्ठी को बन्द कर इधर-उधर हाथ चलाने लगते। चारों और झन्न-झन्न की आवाज गूँज उठती। लड़के प्रसन्न होकर पैसे लूटने लगते– और खुदाराम नौ दो ग्याराह हो जाते।

खुदाराम को सबसे अधिक इन लड़कों ने मशहूर किया।

इसके बाद एक घटना और हुई, जिससे उनकी शोहरत चौगुनी बढ़ गई। किसी गरीब चमार के पाँच वर्ष के पुत्र को हैजा हो गया था। उसके पास वैद्य, हकीम या ड़ाक्टर बाबू के लिए पैसे नहीं थे। कई जगह जाने पर भी किसी ने अभागे

की सुध न ली। बेचारा लड़का उपचार के अभाव पर मरने लगा।

उसी समय उधर से खुदाराम लड़कों की मण्डली के साथ गुजरे। चमार की स्त्री को दरवाजे पर बैठकर रोते देख, वह उसके सामने जाकर खड़े हो गये। पूछने लगे–

"क्यों रो रही है?"

स्त्री ने उत्तर तो कुछ न दिया, हाँ, स्वर को 'पंचम' से 'निषाद' कर दिया।

"क्यों रोती है? बोलती ही नहीं, तुझे भी पैसे चाहिए?"

"पैसे नहीं", स्त्री ने इस बार हिचकते-हिचकते उतर दिया,"दवा चाहिये। मेरा लाल हैजे से मर रहा है !"

"तेरे बच्चे को हैजा हो गया है? पगली कहीं की। इतना खाना क्यों खिला दिया? मुझे तो कभी कुछ खिलाती नहीं। कुछ खिला तो तेरा बच्चा अभी चंगा हो जाय।"

"बाबा मेरे घर में तुम्हारे खाने लायक है ही क्या? कहो तो चने खिलाऊँ।"

"ला, ला। जो कुछ भी हो, दौड़कर ले आ। तेरा बच्चा अभी अच्छा हो जाएगा।"

स्त्री अपने मकान में गयी और एक छोटी-सी पोटली में पाव-ड़ेढ-पाव भुने चने ले आयी। खुदाराम ने पोटली लेकर बालक-मण्डली को चने दान करना आरम्भ किया। देखते-देखते पोटली साफ हो गई। केवल चार-पाँच चने बच रहे। स्त्री के हाथ में देते हुए उन्होने कहा–

"इन चनों को पीसकर बच्चे को पिला दे। यह उसका हिस्सा है। ले जा !"

दूसरे दिन उसी चमारिन ने कस्बे भर में यह बात मशहूर कर दी कि खुदाराम पागल नहीं, होशियार है। मामूली आदमी नही, फ़कीर है, देवता है।

फिर तो हिन्दू-मुसलमान दोनों जाति के लोगों ने विशेषतः स्त्रियों ने खुदाराम को न जाने क्या-क्या बना डाला। कितनों के बच्चे उनकी ऊट-पटाँग औषधियों से अच्छे हो गए। कितनों को खुदाराम की कृपा से नौकरी मिल गई। कितने मुकद्दमे जीत गए। कस्बा उन्हें पूजने लगा।

मगर, खुदाराम ज्यों के त्यों रहे। उनका दिन-रात का चारों और लड़को की मण्डली के साथ घूमना न रुका। अच्छे से अच्छे धनी भी उन्हें कपड़े न पहना सके। किसी के आग्रह करने पर वह कपड़े-धोती, कुरता-टोपी पहन तो लेते, मगर उसके घर से आगे बढते ही टोपी किसी लड़के के मस्तक पर होती, धोती किसी गरीब के झोपड़े पर और कुर्ता किसी भिखमंगे के तन पर। किसी-किसी दिन दो-दो बजे रात को किसी गली में खुदाराम की कण्ठ-ध्वनि सुनायी पड़ती–

तू है मेरा खुदा, मैं हूँ तेरा खुदा,
तू खुदा, मैं खुदा, फिर जुदाई कहाँ?

सात आदमी आपस में बात करते हुए समाज-भवन की ओर जा रहे थे। उनमें एक तो समाज के मंत्री महाशय थे, दो हमारे परिचित पंजाबी और चार बाहर से आये हुए दूसरे आर्य-समाजी थे।

"देखो भाई, इस तरह दबने से काम न चलेगा। हम किसी के धार्मिक कृत्यों में बाधा नहीं देते, तो कोई हमारे पथ में रोड़े क्यों डालेगा? फिर, अगर उन्होंने छेड़ा, तो देखा जायगा। भय के नाम पर धर्म कभी न छोड़ा जायगा।"

इसी समय बग़ल की एक गली से लँगोटी लगाये खुदाराम निकले। वह वही गुनगुना रहे थे–

तू है मेरा खुदा, मैं हूँ तेरा खुदा,
तू खुदा, मैं खुदा, फिर जुदाई कहाँ?

मंत्री महाशय ने पुकारा–

"खुदाराम !"

"चुप रहो !" खुदाराम ने कहा– "मैं कोई युक्ति सोच रहा हूँ।"

"कैसी युक्ति सोच रहे हो, खुदाराम? हमें भी तो बताओ।"

"सोच रहा हूँ कि क्या उपाय करूँ कि खुदा-खुदा में लड़ाई न हो। तुम लोग लड़ोगे?"

"नहीं, लड़ने का विचार नहीं है, पर सवारी जरूर निकलेगी।"

"खाना नहीं खाऊँगा, पर मुँह में कौर जरूर डालूँगा। हा हा हा हा ! यही

मतलब है न?"

"लाचारी है , खुदाराम।"

"तो धर्म के नाम पर खून की नदी बहेगी? हा हा हा हा। तुम लोग इन्सान क्यों हुए? तुम्हें तो भालू होना चाहिए था। शेर होना चाहिए था, वैसी अवस्था में तुम्हार रक्त-पिपासा मजे में शान्त होती। धर्म के नाम पर लड़ने वाले इन्सान क्यों होते है?"

अपरिचित आगन्तुक आर्यो ने शर्माजी से पूछा–

"क्या यह पागल है?"

"हा-हाँ", खुदाराम ने कहा– "कुरान नहीं पढ़ा है, इसलिए पागल है, सत्यार्थ प्रकाश नही देखा है, इसलिए पागल है, धर्म के नाम खुरेजी नहीं पसन्द करता, इसलिए पागल है, खद्दर का कुर्त्ता नहीं पहनता है, इसलिए पागल है, लेक्चर नहीं दे सकता, इसलिए खुदाराम जरुर पागल है। हा हा हा हा ! खुदाराम पागल है। मुसलमान कहते हैं–"तू पागल है, इस बीच में न पड़" हिन्दू भी यही कहते हैं।

अच्छी बात है– लड़ो ! अगर होशियारी का नाम लड़ना ही है तो–लड़ो ।

तू भी इन्सान है मैं भी इन्सान हूँ,
गर सलामत हैं हम, तो खुदाई कहाँ।
तू है मेरा खुदा, मैं हूँ तेरा खुदा,
तू खुदा, मैं खुदा, फिर जुदाई कहाँ?

खुदाराम नाचता कूदता 'हो हो हो' करता अपने रास्ते लगा।

कस्बे के हजारों हिन्दू मर्द आर्य समाज-मन्दिर की और वेद भगवान के जुलूस में शामिल होने के लिए चले गये। मुसलमान पुरुष भी, पुराने पीर की मस्जिद में, जुलूस में बाधा डालने के लिए तैयार हो गए। हिन्दू और मुसलमान दोनों घरों पर या तो बूढ़े थे या बच्चे और स्त्रियाँ। घर घर का दरवाजा भीतर से बन्द था।

एक मुसलमान के दरवाजे पर किसी ने आवाज दी–

"माँ !"

"कौन है?"

"जरा बाहर आओ, माँ ! मैं हूँ खुदाराम।"

दरवाजा खोलकर बूढ़ी बाहर निकली।

"क्या है खुदाराम? खाना चाहिए?"

"नही माँ... आज भीख माँगने आया हूँ–देगी न?"

"क्या है फकीर? तुम्हें क्या कमी है? माँगो, तुमने मेरी बेटी की जान बचायी है। हम हमेशा तुम्हारे गुलाम रहेंगे। माँगो क्या लोगे?"

"पहले कसम खा–देगी न?"

कसम पाक परवरदिगार। खुदाराम, तुम्हारी चीज़ अगर मेरे इमकान में होगी, तो जरुर दूँगी।"

तो, चलो मेरे साथ ! हम लोग हिन्दू-मुसलमान का झगड़ा रोकें। बच्चों को भी ले लो। मैं मुहल्ले भर की–कस्बे भर की–औरतों बच्चों की पलटन लेकर दोनों जातियों के पुरुषों पर आकमण करुँगा, उन्हें खुदा या धर्म के नाम पर लड़ने से रोकूँगा।"

मुसलमान जननी अवाक्-सी खड़ी रह गई ! खुदाराम कहता क्या है?

"चुप क्यों हो गई, माँ? तूने मुझे भीख देने की कसम खायी है। मैं तेरे हित की बात कहता हूँ! इस रक्तपात में पुरुषों के नहीं, स्त्रियों के कलेजे का खून बहाया जाता है । स्त्रियाँ विधवा होती हैं, माताएँ अपने बच्चे खोती हैं, बहिन अपमानित होती हैं। पुरुषों की यह ज़्यादती तुम्हीं लोगों के रोके से रुकेगी। चलो ! उन पत्थरों के आगे रोओ और उन्हें लड़ने से रोको। उन्हें बताओ कि तुम्हारे शरीर तुम्हारी माताओं की धरोहर हैं। उनकी इच्छा के विरुद्ध उनका नाश करनेवाले तुम कौन हो? देर न करो, नहीं तो सब चौपट हो जायगा।"

एक ओर उतेजित मुसलमान खुदा के नाम पर ईट और डंडे चलाने पर उतारु थे, दूसरी ओर हिन्दू वेद भगवान का जुलूस शुद्ध (इनायत अली) रघुनन्दन प्रसाद के परिवार के साथ और हजारों हिन्दूओं के साथ मसजिद के पास डटा था। युद्ध छिड़ने ही वाला था कि गंगा की कल-कल धारा की तरह हजारों स्त्रियों की

कण्ठ-ध्वनि मुसलमान-दल के पीछे सुनाई पड़ी। पहले खुदाराम गाते और उनके बाद स्त्रियाँ उसी पद को दुहराती थीं।

तू है मेरा खुदा, मैं हूँ तेरा खुदा,
तू खुदा मैं खुदा, फिर जुदाई कहाँ?

छोटे-छोटे बच्चों के कण्ठ की उस कोमलता के आगे, माताओं के कण्ठ की करुण धारा के आगे, उत्तेजित युवकों के हृदय की राक्षसता मुग्ध होकर, पुलकित होकर और नतमस्तक होकर खड़ी हो गई ! मुसलमान-दल ने स्त्रियों के इस जलूस के लिए चुपचाप रास्ता दे दिया। हिन्दू दलवाले आँखें फाड़-फाड़कर खुदाराम और उसकी स्वर्गीय सेना की ओर देखने लगे। उस सेना में हरेक हिन्दू और मुसलमान के घर की माताएँ और बहिनें, बेटे और बेटियाँ थीं।

"तुम लोग क्यों यहाँ आयी?" मुसलमानों ने भी पूछा।

"तुम लोग क्यों यहाँ आयी?" हिन्दुओं ने भी प्रतिध्वनि की तरह मुसलमानों के प्रश्नों को दुहराया। एक मुसलमान बूढ़ी आगे बढ़ी–"हम आयी हैं तुम्हें मरने से बचाने के लिए। तुम हमारे बेटे हो, जिन्हें हमने रात-रात भर जागकर भूखों रहकर, दुआएँ माँगकर अपनी आँखों को खुश रखने के लिए, दिल को शांत रखने के लिए इतना बड़ा किया है। तुम्हारे लिए हम खुदा की इबादत करती हैं–तुम्हीं हमारे खुदा हो।"

"यह क्या हो रहा है? धर्म के नाम पर खूब बहाने की क्या जरूरत है? तुम्हें यह शरारत किस शैतान ने सिखायी है? बच्चो, तुम्हारी माँएं तुम्हें खोकर अन्धी हो जायेंगी। उनकी जिन्दगी खराब हो जायगी। बहिश्त पाने पर भी तुम्हें चैन न मिल सकेगा ! लड़ो मत ! खून से पाजी शैतान भले ही खुश हो जाय, पर खुदा कभी नहीं खुश हो सकता। खुदा अगर खून पसन्द करता, तो, हमारे वजू करने के लिए पानी न बनाकर खून ही बनाता। गंगा खूनी गंगा होती, समन्दर खून का समन्दर होता। खून के फेर में न पड़ो, मेरे कलेजे। खुदा खून नहीं पसन्द करता।"

"वेद के पगलो।" खुदाराम ने हिन्दुओं को ललकारा...."चलो, ले जाओ अपना जुलूस? माताएँ तुम्हें रास्ता देती हैं।"

मुसलमानों के हाथ के शस्त्र नीचे झुक गए। बाजा बजाने वाले बाजा बजाना भूल गए। माताओं ने रास्ता बनाया और वेद भगवान की सवारी—हजारों मंत्र-मुग्ध हिन्दुओं के साथ निकल गयी।

सावन के बादल की तरह मधुर ध्वनि से खुदाराम पुनः गरजे, माता वसुन्धरा की तरह माताओं के हृदय से पुनः प्रतिध्वनि हुई—

तूने मन्दिर बनाया, तू भगवान है, मैंने मसजिद उठायी, मैं रहमान हूँ।

तू भी भगवान है, मैं भी भगवान हूँ, तू खुदा, मैं खुदा फिर जुदाई कहाँ?

इस पवित्र जुलूस के नेता थे खुदाराम, उनके पीछे हिन्दू-मुसलमान बच्चे, बच्चों के पीछे दोनों जाति की माताएँ और सबसे पीछे मुसलमान पुरुष—जुलूस के सशस्त्र रक्षकों की तरह चल रहे थे। प्रकृति पुलकित कलेवरा थी, तारिकाएँ खिलखिला रही थीं, चन्द्रमा हँस रहा था। वह दृश्य पृथ्वी का स्वर्ग था।

आपके जवाब के इन्तजार में-
शिवसिंह नयाल
'अलारिप्पु', बी-६/६२, पहली मंज़िल, सफदरजंग इन्कलेव,
नई दिल्ली-११००२९. दूरभाष : ६०६३२७

ज्योति लेजर टाइपसेटिंग
३/१ ईस्ट गुरुअंगद नगर, दिल्ली-९१